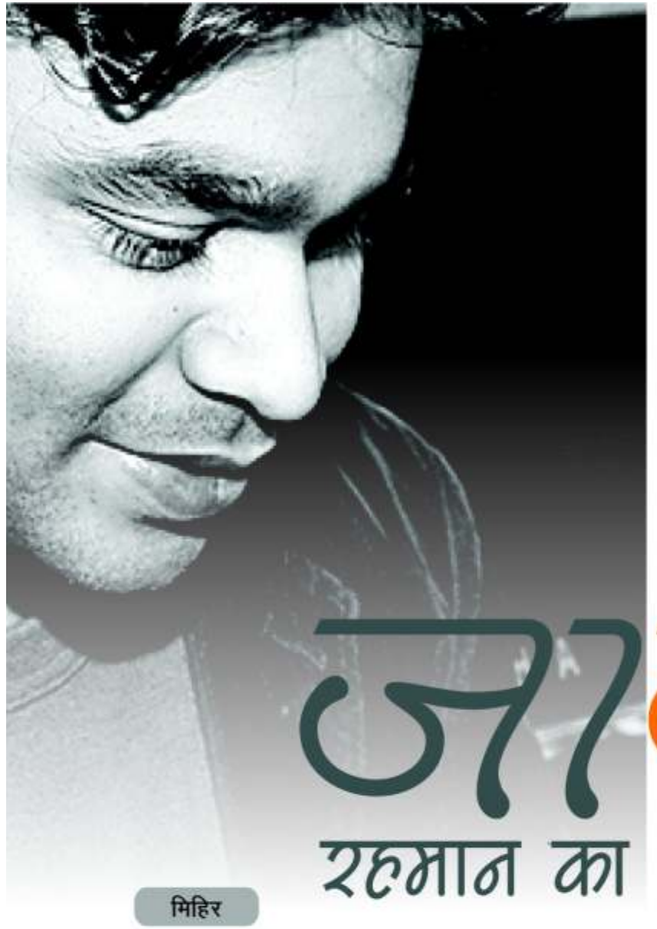

जादू रहमान का

मिहिर

ए.आर. रहमान हमारे दौर के आर.डी. बर्मन हैं। जब हिन्दी सिनेमा ने पंचम यानी राहुल देव बर्मन को खोया तो लगा था कि एक दौर ही खत्म हो गया है। उनकी आखिरी फिल्म *1942 ए लव स्टोरी* का गीत "एक लड़की को देखा तो ऐसा लगा" अपने भीतर उस दौर की तमाम खूबसूरती समेटे था तो एक दूसरे गीत "रूठ न जाना" में वही शरारत थी जो पंचम के संगीत की खास पहचान थी। लगा पंचम के संगीत की शरारतें अब लौटकर नहीं आएँगी। लेकिन तभी दक्षिण भारत से एक तमिल फिल्म आई – *रोजा*। इस फिल्म के हिन्दी संस्करण में चमत्कृत करने वाला गीत था "छोटी-सी आशा"। इस गीत में वही पंचम वाली बदमाशी और भोलापन एक साथ था। ए.आर. रहमान के साथ हमें हमारा खोया हुआ पंचम वापिस मिल गया।

बचपन में मैं रहमान के संगीत वाली हर फिल्म का ऑडियो कैसेट ज़िद करके खरीदा करता था। यह वो समय था जब हमारे घर में नया-नया टेप रिकॉर्डर आया था। हम उसमें अपनी आवाज़ें रिकॉर्ड कर सुनते थे। वो हमें अपनी आवाज़ें लगती ही नहीं थीं। हम उसमें रहमान के गाने सुनते। मेरा दोस्त विशाल सांगा बहुत अच्छा डाँस करता था। रहमान की धुनों पर तो वो एक खास तरह का ब्रेक डाँस करता। हम दोस्त एक दूसरे के जन्मदिन का बेसब्री से इन्तज़ार करते। हर जन्मदिन की पार्टी का सबसे खास आइटम होता विशाल का ब्रेक डाँस। हम कमरे के सारे खिड़की/दरवाज़े बन्द कर लेते। मैं टेप रिकॉर्डर चालू करता और कमरे में रहमान का "हम्मा-हम्मा" गूँजने लगता। विशाल अपना ब्रेक डाँस शुरू करता और हम उसे निहारते रहते। कभी-कभी वो हमें भी कोई खास स्टेप सिखा देता और हम खूब खुश हो जाते। थोड़ी देर में हम सारे दोस्त एक साथ नाचने लगते।

मेरी तरह विशाल को भी गानों का बहुत शौक था। खासकर रहमान के गानों का। उसके पास एक वॉकमैन था जिसे कान में लगाकर वो रात-रात भर गाने सुना करता था। मैं जब भी कोई नई कैसेट लाता तो वो रातभर के लिए उसे मुझसे माँगकर ले जाता। रहमान की कैसेट तो छूटती ही नहीं थी। दिन में मैं सुनता और रात में विशाल। उसे हिन्दी ठीक से बोलनी नहीं आती थी। वो अटक-अटक कर हिन्दी बोलता और बीच-बीच में शब्द भूल जाता। मेरे नए जूते देखकर कहता, "छुटकू तेरे ये तो दूसरों के ये से बहुत अच्छे हैं!" मुझे यह सुनकर बहुत मज़ा आता था।

विशाल संगीत में जीनियस था। मेरी और उसकी पसन्द कितनी मिलती थी। *दिल से...* के एक-एक गीत को वो हज़ारों बार सुनता था। मुझे कहता, "पता है छुटकू ये रहमान की आदत ही खराब है। जाने क्या-क्या करता है। अब बताओ, गाने की शूटिंग ट्रेन पर होनी है तो पूरे गाने में ही ताल की जगह ट्रेन की आवाज़ को पिरो दिया। पूरे गाने में ऐसी ताल जैसे कोई लम्बी ट्रेन किसी ऊँचे पुल पर से गुज़र रही हो! कमाल है इसका भी हाँ।" मैं घर पर माँ से कहता, "पता है माँ, मेरे तीनों दोस्त इंजीनियर बनेंगे। गौरव और रोहित तो सादा इंजीनियर बनेंगे और विशाल बनेगा म्यूज़िक इंजीनियर!"

विशाल से मिले अब तो कई साल हो गए हैं। मैं दिल्ली में पढ़ाई कर रहा हूँ और विशाल ने कर्नाटक में अपनी हैंडलूम फैक्ट्री शुरू कर दी है। लेकिन आज भी "हम्मा-हम्मा" सुनते ही मेरे पाँव थिरकने लगते हैं। उस वक्त विशाल बहुत याद आता है।

रहमान को मालूम है कि हम आधे से ज़्यादा पानी के बने हैं। पानी की आवाज़ सबसे मधुर होती है। इसीलिए वे *ताल* में बूँद-बूँद टपकते पानी की थिरकन हो या *रोजा* में बहते झरने की कलकल। रहमान की सबसे पसन्दीदा धुनें सीधा प्रकृति से निकलकर आती हैं।

बार-बार अपने गीतों में इस आवाज़ को पिरो देते हैं। *साथिया* में उछालते पानी का अन्दाज़ हो या *लगान* में गरज़ते बादलों की आवाज़। *ताल* में बूँद-बूँद टपकते पानी की थिरकन हो या *रोजा* में बहते झरने की कलकल। रहमान की सबसे पसन्दीदा धुनें सीधा प्रकृति से निकलकर आती हैं।

अपने संगीत में वे नए वाद्ययंत्रों के इस्तेमाल में माहिर हैं और नए गायकों को मौका देने में सबसे आगे। *दिल से* के लिए उन्होंने डोब्रो गिटार का उपयोग किया तो "मुस्तफा-मुस्तफा" गीत के लिए ब्ल्यूस गिटार का। अपने गीत "टेलीफोन-टेलीफोन" के लिए उन्होंने अरबी वाद्य ऑड (Ooud – गिटार की तरह के परम्परागत वाद्ययंत्र) का प्रयोग किया। रहमान ने हमेशा नए और उभरते गायकों को मौका दिया है – चित्रा, हेमा सरदेसाई, मुर्तजा, मधुश्री से लेकर नरेश अय्यर और मोहित चौहान तक। उनका संगीत लातिन अमरीकी संगीत को हिन्दुस्तानी संगीत से जोड़ता है। उनके बहुत से गीतों पर सूफियाना प्रभाव साफ नज़र आता है। *दिल से* के गीतों में ये सूफियाना प्रभाव ही था जिसने उसे रहमान का और हमारे दौर का सबसे खूबसूरत अल्बम बना दिया। *लगान* में उन्होंने लोक संगीत को जगह दी है। "घनन-घनन" तथा "मितवा" में ढोल का खूब उपयोग मिलता है। "राधा कैसे न जले" में लोक धुनों व बाँसुरी का बहुत अच्छा उपयोग है। *स्वदेस* की धुन में स्वागत में बजने वाली धुनों का इस्तेमाल एकदम मौके के माफिक है। रहमान के लिए धुनों में नयापन कभी समस्या नहीं रहा। पूरी दुनिया सामने पड़ी है। हर फूल-पत्ती में आवाज़ छुपी है। बस दिल से सुनने वाला चाहिए।

मेरे पिता आर के शेखर जाने-माने संगीतकार थे। हमारे पुरखे हरिकथा किया करते थे। हमारे घर बहुत सारे वाद्य यंत्र हुआ करते थे। पता नहीं कब इन्हें खेलते-खेलते इनमें दिल लग गया। एक बार पिता सिंगापुर से यूनीबॉक्स और क्लेवॉयलिन नाम के दो वाद्य यंत्र लाए। दोनों कमाल के सुरीले और मीठे लगा करते। क्लेवॉयलिन समझो आज का सिंथेसाइज़र ही है। ये दोनों साज़ बड़े महँगे थे। इसलिए मुझे इनके पास भी फटकने न दिया जाता। पिता को जब देखता वे कुछ न कुछ काम करते रहते।

तब मैं सिर्फ नौ साल का ही तो था कि पिता नहीं रहे। उनके जाने के अन्दाज़न दो साल बाद घर में तंगी होने लगी। ग्यारह की उमर में ही मुझे घर चलाने के लिए कुछ काम करना पड़ा। कुछ नाटकों में भी काम किया। तुमने शायद इलयाराजा का नाम सुना होगा। वे महान संगीतकार हैं। मैंने उनसे बहुत सीखा है। वे मेरे गुरू हैं। मैंने कुछ दिन उनके ग्रुप के साथ भी काम किया है। उन दिनों मुझे ईश्वर से बहुत चिढ़ होती थी कि वह दुखों के दिनों में हमारी कोई मदद नहीं कर रहा है।

संगीत की दुनिया में हर वक्त कुछ नया करने की कोशिश करता हूँ। कुछ नया सोचने की कोशिश करता हूँ। और फिर इसी दुनिया में खो जाना भी पसन्द है मुझे।

ए आर रहमान...

ऑलम्पिक में प्रथम विजेता को...

प्राचीन ऑलम्पिक में जैतून के फूलों का ताज पहनाया जाता था। 1896 में जब ऑलम्पिक फिर से शुरू हुए तब उन्हें चाँदी का पदक दिया जाता था। 8 साल बाद 1904 में सेंट लुइस ऑलम्पिक से सोने का पदक दिया जाने लगा। 1912 में आखिरी बार पूरी तरह सोने से बना पदक दिया गया था। आजकल के स्वर्ण